भारतीय षिक्षा में, उत्तर वैदिक काल में षिक्षा का एक अध्ययन

डा. रोहित कुमार
(एम0एड0,यू0जी0सी0नेट ,पीएच0डी0षिक्षाषास्त्र)
(विभागाध्यक्ष बी.एड. भगवान आदिनाथ कालेज ऑफ एजूकेषन
महर्रा,ललितपुर)

सारांष — भारत का अतीत बडा ही गौरवमय एवं अध्यात्मिकता से भरा रहा है । प्राचीन काल में भारत में आध्यात्मिकता से ही सामाजिक,राजनैतिज्ञ और आर्थिक धाराओं का प्रवाह हुआ है। भारत में षिक्षा के प्रसार का अध्ययन करना प्रारम्भ करते है तो वैदिक काल ही प्रारम्भिक काल माना जा सकता है। वैदिक षिक्षा प्रणाली भारत एवं संम्पूर्ण विष्व की सबसे प्राचीनतम षिक्षा प्रणाली में से एक है। इतिहास कारो के अनुसार 2500 ईषा पूर्व से 500 ईषा पूर्व के समय को वैदिक काल के नाम से जाना जाता है। वैदिक काल को वेदों का काल भी कहा जाता है। वैदिक काल के अंतिम काल को उत्तर वैदिक काल के नाम से भी जाना गया । उत्तर वैदिक काल की अवधि सामान्यता 1400 ई.पू. से लेकर 200 ई.पू. तक मानी जाती है । इस काल में सूत्र युग का प्रारम्भ हुआ और इस काल में मौखिक के साथ साथ अब ग्रन्थों की रचना प्रारम्भ हुई ।इसलिए इस काल में प्रदान की जाने वाली षिक्षा का आधार धर्म और धार्मिक क्रियाये ही रहा है षिक्षा प्राप्त करने का मुख्य उद्देष्य मोक्ष की प्राप्ति रहा है। उत्तर वैदिक युग का प्रारम्भ ऋग्वेदिक युग के अंत से होता है और बौद्व और जैन धर्म के प्रारंभ काल पर अंत हुआ। इस अध्ययन में वैदिक काल में विद्यार्थी और उनके गुरुओं में बीच के संबंध , विद्यार्थीयों के दैनिक चर्या,षिक्षा पद्वति एवं नारी षिक्षा आदि का अध्ययन किया गया।

प्रमुख षब्दावली — वैदिक काल, वेद,, संस्कार, सूत्र, उत्तर वैदिक काल।

प्रस्तावना — उत्तर वैदिक युग का प्रारम्भ ऋग्वेदिक युग के अंत से होता है और बौद्व और जैन धर्म के प्रारंभ काल पर अंत हुआ। इस प्रकार उत्तर वैदिक काल की अवधि सामान्यता 1400 ई.पू. से लेकर 200 ई.पू. तक मानी जाती है। इस लम्बे 1200 वर्ष के काल में भारत वर्ष के लोगों की जीवन शैली के साथ साथ सामाजिक ,धार्मिक एवं आर्थिक परिवर्तन हुए। इस युग की षिक्षा प्रणाली को अध्ययन के आधार पर दो भागों में विभक्त कर सकते है—

1. उपनिषद काल (1400 ई.पू. से 600 ई.पू.)
2. सूत्र काल — (600 ई.पू. से 200 ई.पू.)

उपनिषद काल —उपनिषद काल को यज्ञ काल भी कहा जाता है इस काल में यज्ञ सम्बन्धी ज्ञान का पर्याप्त मात्रा में विकास हो चुका था । यज्ञ उपकरणों के अत्यधिक विकास हो जाने के कारण अनेक मत उत्पन्न हो गये इस कारण अनेक मत— मन्तरो का विकास हुआ । इसी युग में होता,अध्वर्यु,उद्गाता,तथा ब्रह्मा इन चार खण्डों में पुरोहितों का विभाजन हो गया था। पुरोहितों के अपने अपने खण्डों के अनुसार क्रमषः होतृ, अध्वर्यु, उद्गतृ, तथा ब्रह्मन विद्यालयों की स्थापना की । चारों प्रकार के विद्यालयों के पाठ्क्रम अलग—अलग थे ।

होतृ विद्यालय — होतृ विद्यालयों की स्थापना होता मत के पुरोहितो द्वारा की गई । इन विद्यालयों में छात्रों को पद्यात्मक ऋग्वेद का अध्ययन कराया जाता था ।

अध्वर्यु विद्यालय — इन विद्यालयों की स्थापना अध्वर्यु मत के पुरोहितों के द्वारा की गई । इन विद्यालयों में छात्रों को गद्यात्मक यजुर्वेद का अध्ययन कराया जाता था ।

उद्गतृ विद्यालय — इन विद्यालयों की स्थापना उद्गता मत के पुरोहितों के द्वारा की गई । इन विद्यालयों में छात्रों को सामवेद का अध्ययन कराया जाता था।

ब्रह्मन् विद्यालय — इन विद्यालयों की स्थापना ब्रह्मा मत के पुरोहितों के द्वारा की गई । इन विद्यालयों में छात्रों को अथर्ववेद के साथ साथ अन्य तीन वेदों का अध्ययन किया जाता था ।

उपनिषद काल में याज्ञिक प्रक्रिया का मुख्य रुप से विकास हुआ । इस कारण इस काल में षिक्षा प्रदान करने का उद्देष्य ऐसा ज्ञान प्रदान करना था जिससे विद्यार्थी यज्ञ प्रक्रिया में निपुण हो सकें एवं यज्ञ के मंत्रों को कठंस्थ कर सकें । इस समय वेदों की भाषा जन साधारण की की भाषा से अलग हो गई । इस कारण ब्राह्मण द्वारा वेद मंत्रों की व्याख्या की गई वो भी जन साधारण की भाषा से पृथक थी । अब वेद मंत्रों तथा यज्ञों पर षिक्षित ब्राह्मणों का एकाधिकार हो गया।

उपनिषद काल की षिक्षा प्रणाली— उपनिषद काल में षिक्षा का मुख्य उद्देष्य सत्य की प्राप्ति । सत्य की प्राप्ति से बह्म की प्राप्ति संभव है । इस कारण उपनिषद काल में ब्रह्म की प्राप्ति ही मुख्य उद्देष्य था। इस काल में अपरा षिक्षा लुप्त ही हो गई । भौतिक विज्ञानों तथा षास्त्रों की अवनति हुई । इस काल में भौतिक विकास को संसार का मायाजाल माने जाने लगा इस कारण विकास के प्रयत्न ही हुए। अतः विद्या केवल परा विद्या तक सीमित रह गई।

षिक्षा पद्वति — वैदिक काल में षिक्षा में श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन की तीन प्रणाली प्रचलित थी। परन्तु उपनिषदकाल में इनके अतिरिक्त एक और प्रणाली विकसित हुई स्वाध्याय। इस काल मे ऐसा माने जाने लगा कि ब्रह्म की प्राप्ति केवल स्वाध्याय से ही संभव है इसलिए स्वाध्याय प्रणाली अधिक प्रचलित हुई। इस प्रणाली के अंतर्गत षिष्य गुरु से आवष्यक निर्देष तथा निर्देषन पाकर एकान्त वन में जाकर वेद ,वेदांग, ब्राह्मण,आरण्यक तथा उपनिषदों का अध्ययन कर उनकी विवेचना किया करते थे। इस युग में प्रष्नोत्तर एवं वाद विवाद प्रणाली का भी पर्याप्त विकास हो चुका था। इस काल में षिष्य की क्रियाषीलता पर भी बल दिया जाता था। अध्ययन अध्यापन में नायक विधि का प्रचलन था षिक्षक की अनुपस्थिति में वरिष्ठ व मेधावी छात्र षिक्षण कार्य करते थे।

पाठ्य विषय — उपनिषद काल में केवल परा विद्या पर ही जोर था। आध्यात्मिक विकास चरम पर था । परा विद्या की अनेक नई नई षाखाओ का विकास हुआ ये सभी नवीन एवं प्राचीन षाखाएँ अब पाठ्य विषय बन चुकी थी । परा विद्याओं मे इस समय चारों वेद ,व्याकरण, गणित, नक्षत्र विद्या, ज्योतिष विद्या,क्षत्र विद्या,नृत्य, संगीत, इतिहास, पुराण, श्राद्व, सर्प विद्या आदि प्रचलित थी।

अध्ययन काल— वैदिक काल की भॉति उत्तर वैदिक काल के उपनिषद काल में षिक्षा ग्रहण करने के लिए अध्ययनकाल सामान्यत 12 वर्ष का ही थी । इस काल में भी उपनयन संस्कार 12 वर्ष की अवस्था में होता था और अध्ययन काल 12 वर्ष का ही था अर्थात् 24 वर्ष की अवस्था में षिक्षा समाप्त हो जाती थी । इस 12 वर्ष के अध्ययन काल में विद्यार्थी को ब्रह्मचार्य धर्म का पालन करना होता था एवं नियम का गुरु के निर्देषों का पालन करते हुए अपने अध्ययनकाल में अनुषासित रहना

होता था। परन्तु प्रत्येक षिष्य के लिए आवष्यक नही था कि 12 वर्ष का अध्ययनकाल पूर्ण करने के पश्चात षिक्षा ग्रहण करना बंद कर ग्रहस्थ आश्रम को धारण करे । कई षिष्य संपूर्ण जीवन ब्रह्मचार्य धर्म का पालन करते हुए अध्ययन करते थे। भारद्वाज ने सम्पूर्ण जीवन ब्रह्मचार्य धर्म का पालन करते हुए षिक्षा ग्रहण की थी। छात्र अपनी योग्यता एवं रुचि के अनुसार अपने षिक्षा ग्रहण करने का काल स्वयं चुनता था।

छात्र की दिनचर्या – वैदिक काल की भॉति इस काल में छात्रों की दिनचर्या नियमित एवं अनुषासित थी । गुरुकुलों में छात्रों के मानसिक ,षारीरिक, चारित्रिक एवं व्यवहारिक विकास को ध्यान में रखकर गुरु विद्यार्थी की दिनचर्या का निर्धारण करते थे । प्रतिदिन व्यायाम, भिक्षाटन अनिवार्य था। भिक्षाटन में प्रत्येक विद्यार्थी को घूमना होता था । प्रत्येक विद्यार्थी को आश्रम की देखरेख , सफाई आदि में भी योगदान करना अनिवार्य था। मानसिक विकास के लिए प्रत्येक विद्यार्थी प्रतिदिन श्रवण,मनन,निदिध्यासन तथा स्वाध्याय करता था। षिष्य के चारित्रिक विकास के लिए षिष्यों को आश्रम में कठोर अनुषासन में ब्रह्मचर्य का पालन करना होता था। षिष्यों को मादक पदार्थ, मॉस ,श्रृंगार सामग्री , सुगन्ध ,रस ,स्त्री प्रसंग, काम ,क्रोध , आदि पूर्ण निषेध था ।

नारी षिक्षा – उपनिषद काल में वैदिक काल की भॉति नारी को सामाजिक सम्मान एवं अधिकार प्राप्त थे उनका पर्याप्त रुप से षैक्षिक विकास भी हो रहा था परन्तु वैदिक काल की भॉति उन्हें गुरुकुलों में षिक्षा प्रदान नही की जाती थी अब वे घर पर रहकर ही षिक्षा ग्रहण किया करती थी। इनके लिए पृथक आश्रम अथवा गुरुकुलो की व्यवस्था नही थी । इनके निजी सगे संबन्धी ही उन्हे षिक्षा प्रदान करते थे।

सूत्र कालीन षिक्षा –600 ई0पू0 से 200 ई0पू0 तक के समय को सूत्र साहित्य युग के नाम से जाना जाता है। इस काल में मनुष्य द्वारा अर्जित ज्ञान तथा साहित्य विस्तृत हो चुका था अब मौखिक रूप से उनको कठंस्थ रख पाना असंभव प्रतीत होने लगा था । अब महान विचारको तथा चिंतको द्वारा अर्जित ज्ञान को संरक्षित तथा सुरक्षित रखा जाए। इसके लिए सूत्र साहित्य का उदय और विकास हुआ। सूत्रों में जिन महान सिद्वान्तों ,आदर्षो तथा सत्यों का उल्लेख किया गया है वे अत्यन्त संक्षेप है परन्तु उनके अर्थ विषाल है। इस प्रकार सूत्र साहित्य में नवीनता कही नही है परन्तु उसको प्रस्तुतीकरण नवीन है। इस युग के सूत्र साहित्य का अध्ययन करने पर इस काल की षिक्षा व्यवस्था का ज्ञान होता है।

अक्षर स्वीकरण तथा उपनयन संस्कार – सूत्रकाल में अक्षर ज्ञान पर्याप्त मात्रा में हो चुका था इन अक्षरों का ज्ञान बालक की वास्तविक षिक्षा प्रारम्भ होने से पूर्व कर दिया जाता था। बालको को अक्षर ज्ञान कराना प्रारम्भ किया जाता था तब एक संस्कार सूत्रकाल में कराया जाने लगा जिसे **अक्षर स्वीकरण** के नाम से पुकारा जाने लगा। इस संस्कार में कुल गुरु बालक को भूमि पर बिछे चावलों पर विठाकर सोने अथवा चांदी की लेखनी से एक या दो अक्षर लिखवाता तथा सरस्वती आदि देवी देवताओं की पूजा करवायी जाती थी। अक्षर स्वीकरण संस्कार के पश्चात वैदिक काल की भॉति बालकों का उपनयन संस्कार किया जाता था तभी वास्तविक षिक्षा प्रारम्भ होती थी ।

षिक्षा सत्र – सूत्रकाल में षिक्षा सत्र श्रावण मास की पूर्णिमा को प्रत्येक आश्रम में उपाकर्मन नामक समारोह किया जाता और इसी समारोह में षिक्षा सत्र का आरम्भ होता था तथा प्रायः 6 माह के पश्चात पौष मास की पूर्णिमा को उत्सर्जनम् समारोह के साथ ही षिक्षण सत्र की समाप्त किया जात था । इस प्रकार आश्रमों में षिक्षण सत्र 5 से 6 माह का होता था। ष्शेष मासों मे छात्र स्वयं अध्ययन किया करते थे।

अध्ययन काल – वैदिक काल के समान सूत्रकाल में भी वेदों के अध्ययन के लिए समय निर्धारित किया गया था। एक वेद के अध्ययन के लिए 12 वर्ष का समय निर्धारित किया गया था । इस प्रकार यदि कोई विद्यार्थी चारो वेदों का अध्ययन करना होता था तो उसे 48 वर्ष का समय देना होता था । सूत्रकाल में विद्यार्थी बुद्वि और क्षमता के अनुसार ही वेदों के अध्ययन काल का चयन किया करते थे।

पाठ्य विषय –

"कल्पोवेद–विहितानांकर्मणामानुपूर्वेण कल्पषास्त्रम्"

अर्थात् वेद में विहित कर्मो का क्रमपूर्वक व्यवस्थित करने वाले सूत्रग्रन्थो का अध्ययन कल्प में किया जाता है। वेदांग साहित्य मे कल्प का दूसरा स्थान आता है । यज्ञ–यागादि का ज्ञान बहुत विस्तृत हो जाने के कारण उनका अध्ययन क्रमबद्व रुप से किया जाए इस कारण उस युग मे सूत्रषैली में इन ग्रन्थों की रचना की गई। सूत्र साहित्य, वैदिक साहित्य और लौकिक संस्कृत साहित्य के बीच को जोडने वाला साहित्य है। कल्पसूत्र मुख्यतः चार प्रकार के है–

1. **श्रौतसूत्र** 2. **गृह्मसूत्र**
2. **धर्मसूत्र** 4. **षुल्बसूत्र**

1. श्रौत सूत्र– श्रोत सूत्र अति महात्वपूर्ण साहित्य है । श्रौत सूत्र का विषय यज्ञ है। इसमें प्राचीन काल से चली आने वाली यज्ञ संबधी क्रियाओं के आकार प्रकार विधि निषेध आदि का वर्णन है अर्थात् इनमें यज्ञीज विधि विधानों का विस्तार से चर्चा मिलती है।ब्राहामण ग्रन्थों में वर्णित और अग्नि में सम्पाद्यमान यज्ञ यागदि अनुष्ठानों का वर्णन करने वाले सूत्रग्रन्थों को श्रौतसूत्र कहा गया। श्रौत सूत्रों के माध्यम से ही हम उस युग की धार्मिक परम्पराओं धार्मिक रुढियों , विधानों तथा धारणाओं को समझने में सहायता मिली है।

2. गृह्मसूत्र – गृह्य सूत्रों का प्रमुख विषय गृहस्थ जीवन है । इनमें मनुष्य के आचार विचार ,कर्त्तव्य ,उत्तदायित्व ,दैनिक उपासना , यज्ञ , संस्कार आदि के संबंध में विविध नियम हैं। गृह्मसूत्रों में गृह्मग्नि में होने वाले योगों तथा उपनयन , विवाह , श्राद्व आदि संस्कारों का सम्यक् वर्णन किया गया है । पशुकल्याण, कृषि कार्य तथा गृह निमार्ण से सम्बन्धित अनुष्ठानों का विवरण गृह्मसूत्रों में विद्यमान है ।

3. धर्मसूत्र – गृह्य सूत्र और धर्म सूत्र काफी हद तक समान है किन्तु उनमें विषेष अंतर यही है कि जहां गृह्य सूत्र जीवन के विधि निषेध का सविस्तार वर्णन करते है वही धर्म सूत्र इसका अत्यन्त संक्षिप्त में उल्लेख करते हैं तथा धर्म सूत्र में धर्म पर अधिक बल दिया गया है।धर्म सूत्र कल्प के अभिन्न अंग है इनके माध्यम से चर्तुवर्ण तथा चारों आश्रमों के कर्त्तव्यों विषेषतः राजा के कर्त्तव्यों का विषिष्ट प्रतिपादन है।

4. षुल्बसूत्र – शुल्बसूत्र को श्रौतसूत्रों का एक महात्वपूर्ण अंग माना जाता है जिसमें वेदि के निमार्ण की विधि का विषिष्ट रुपेण प्रतिपादन उपलब्ध है जो भारतीय आर्यो के प्राचीन ज्यामिति सम्बन्धी कल्पनाओं तथा गणनाओं के प्रतिपादक होने के कारण विषेष महात्व रखता है जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण की भी पुष्टि करते हैं। इसे सूत्र साहित्य का विषय भी यज्ञीय और कर्मकाण्ड है। इसमें यज्ञ की वेरियों के नाम इनकी आकृति तथा अन्य ज्यामितीय आकृतियों के बारे में जानकारी मिलती हैं।

श्रौत सूत्र विषय में नितांत कर्मकांडीय होने के कारण इसका ऐतिहासिक महत्व बहुत कम या न के बराबर है । किंन्तु गृह्य और धर्म सूत्रों का गृहस्थ और सामाजिक जीवन से संबधित होने के कारण इसका ऐतिहासिक महत्व है। सूत्रकाल भारतीय वैदिक काल मे षिक्षा के विकास में अति महात्वपूर्ण है इस काल में पाणिनि, कात्यायन तथा पंतजलि जैसे विद्वानों ने अपनी रचनाओं से इस काल को और महात्वपूर्ण बनाया है। यह काल व्याकरण अध्ययन को अधिक महात्व प्रदान करता है इस काल में अष्टाध्यायी ,वार्तिक तथा महाभाष्य जैसे व्याकरण ग्रन्थों की रचना की गई। इन ग्रन्थों को पाठ्य विषयों में विषेष स्थान प्राप्त है। व्याकरण के अतिरिक्त सूत्र युग में वेद,वेदांग,छन्द,कल्प,निरुक्त, संख्या षास्त्र , ज्योतिष ,चिकित्सा, दर्षन ,न्याय,योग आदि के षिक्षण की व्यवस्था भी सूत्र युग में ही कर दी गई थी। सूत्रकाल लौकिक युग की षुरुआत के लिए अति महात्वपूर्ण युग रहा ।

षिक्षण पद्वति – सूत्रकाल में षिक्षण पद्वति वेद काल के ही समान थी। इस काल में भी गुरु षिष्य परंपरा धार्मिक भावनाओं पर आधारित थी। षिक्षक का षिक्षण और विद्यार्थीयों में षिक्षा ग्रहण करने कार्य दोनों ही धार्मिक भावनाओं पर आधारित थी। पृथक पृथक षिक्षकों की षिक्षण षैली एवं षिक्षण पद्वतियां पृथक पृथक थी । इस काल में षिक्षण पद्वति

मुख्यतः मौखिक ही थी परन्तु इसमें श्रवण, मनन, तथा निदिध्यासन एवं स्वाध्याय पर बल दिया गया।

नारी षिक्षा – इस युग में भी नारी षिक्षा वैदिक युग के समान ही थी समाज में नारी का स्थान सम्मान जनक था। इस युग में नारी षिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था थी । सूत्रकाल में नारियॉ अध्यापन कार्य भी सम्पादित करने लगी थी। इस युग में बालिकाओं की षिक्षा मुख्यतः घरों में होती थी। समाज में बाल विवाह का प्रचलन नही था । विवाह में आठ प्रकारों ब्रह्म विवाह ,दैव विवाह , प्रजापत्य विवाह, गंधर्व विवाह , विवाह राक्षस ,पैषाच विवाह का उल्लेख वाला यंत्र है सूत्र तथा अनेक धर्मसूत्रों में इनका वर्णन मिलता है। बहु विवाह का प्रचलन था किन्तु विधवा का अपने पति की संपत्ति पर अधिकार माना जाता था। अधिकतर सूत्रकार तलाक प्रथा का विरोध करते हैं। वषिष्ठ किसी भी परिस्थिति में पत्नी के त्याग की अनुमति नही देते है तथा आपस्तबं ने इसके अपराध में पति के लिए कठोर दंड का विधान किया है। कन्या को भी कुछ षर्तो पर स्वयमेंव विवाह करने की अनुमति थी।

कृषि एवं पषुपालन –सूत्रों मे खेती के प्रत्येक स्तर से संबधित संस्कारो का उल्लेख है । बीज बोते समय, फसल काटते समय लवनी करते समय तथा अन्न को बोरे में रखते समय अनेक विधि नियमों का पालन का विधान किया गया है। सूत्र काल में चावल और जौ मुख्य फसले हुआ करती थी। पशुओं को अमूल्य संपत्ति समझा जाता था । गृह सूत्रों में पषुओं की वृद्वि तथा उनके स्वास्थ्य के लिए अनेक प्रार्थनाएं मिलती है गायों को पवित्र मानने की धारण तेजी से विकसित हो रही थी ।

व्यापार वाणिज्य –वैष्विक व्यापार वाणिज्य करते थे गृह सूत्रों में पुण्य सिद्वि नामक संस्कार का उल्लेख है जो व्यापार में लाभ पाने के लिए किया जाता था । संभवत इस समय सिक्कों का प्रचलन हो गया था । पाणिनि ने पाण , कार्षापण ,पाद,तथा वाह नामक सिक्कों का उल्लेख किया गया है।

परिषद् – सूत्रकाल में परिषद नामक षिक्षण संस्थान भी थी । जिसका कार्य क्षेत्र एवं उद्देष्य अन्य शैक्षिक संस्थानों से पूर्णत् अलग था। गीता के अनुसार "एक परिषद कम से कम 10 सदस्यों की होनी चाहिए जिसमें 4 सदस्य वे हों जो पूर्णतः चारों वेदो का अध्ययन कर चुके हों तथा तीन सदस्य क्रमषः तीन सामाजिक पदों (एक विद्यार्थी,एक गृहस्थ,और एक योगी) और तीन ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो तीन विभिन्न प्रकार के नियमों का ज्ञान रखते हों। ये परिषदें इतनी ष्वक्तिषाली होती थी कि इनका निर्णय राजा तथा प्रजा दोनों के लिए मान्य होते थे।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष (Finding)– निष्चित रुप से उत्तर वैदिक काल में प्रचलित षिक्षा पद्वति एवं षिक्षा के प्रसार एवं उस समय दी जाने वाली षिक्षा हमारे मार्ग दर्षन का अवष्य ही करती है । वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की कमी अवष्यक रुप से प्रतीत हो रही है । यदि वैदिक काल एवं उत्तर वैदिक काल में प्रचलित रीतियों में से कुछ रीतियों का प्रयोग वर्तमान काल की षिक्षा पद्वित में कारगर होगी। गुरुयों का सम्मान,षिष्यों के साथ पुत्रवत् व्यवहार एवं उनमें सीखने एवं करने के लिए पर्याप्त समय प्रदान करना आदि मुख्य बिन्दु है जो हमारी वर्तमान षिक्षा पद्वति में समायोजित करने पर निष्चित रुप से सार्थक परिणाम प्राप्त होगे।

उपसंहार – इस प्रकार हम वैदिक काल में भारत में षिक्षा व्यवस्था उत्कृष्ट थी उत्तर वैदिक काल में भी मानव जाति क मानवीय एवं सामाजिक विकास के लिए आवष्यक आचरण का विकास हुआ। परन्तु इस काल में षिक्षा व्यवस्था में जन सामान्य भाषा का आभाव था। षिक्षा का माध्यम संस्कृत एवं मौखिक रुप से विद्या प्रदान करने का प्रचलन था परन्तु धीरे –धीरे इन्हे लिपिबद्व एवं संग्रहित करने के लिए ग्रन्थों की रचना प्रारम्भ हो गई थी। गुरु षिष्य परम्परा अद्भुत थी एवं षिक्षा का मुख्य उद्देष्य मोक्ष की प्राप्ति थी।

संदर्भ सूची–

1. अल्तेकर ए. एस. एजूकेषन इन एन्षियेण्ट इण्डिया
2. मुखर्जी आर. के. एजूकेषन इन एन्षियेण्ट इण्डिया. पृ. 55–56
3. बाषम ए. एल. अद्भूत भारत पृ. 193
4. द्विजेन्द्र नारायण एवं श्रीमाली कृष्ण मोहन. प्राचीन भारत का इतिहास पृ. 137
5. वैदिक कालीन षिक्षा की विषेषताएँ तथा उद्देष्य षोभना त्रिपाठी एकेडमिक काउन्सलर इग्नू, रायबरेली (उत्तर प्रदेष)
6. त्यागी गुरसरन दास भारत में षिक्षा का विकास,विनोद पुस्तक मंदिर आगरा –2

7. जौहरी एवं पाठक भारतीय षिक्षा का इतिहास,श्री विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा –2

8. अग्रवाल जे.सी. भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास,आर.एस.ए. इन्टरनेषनल ,आगरा –2

9. तोमर लज्जाराम भारतीय षिक्षा के मूल ,सुरुचि प्रकाषन केषव कुंज,झण्डेवाला नई दिल्ली